हिन्दी-साहित्य का स्वर्णिम युग

Hindi Sahitya ka Swarnim Yug

स्वर्ण या स्वर्णिम युग उस काल-खण्ड को कहा जाता है, जिस में किसी एक या किन्हीं अनेक द्वारा कोई ऐसा महत्त्वपूर्ण कार्य किया गया हो, जिसके करने से न केवल देश-काल, बल्कि सार्वकालिक दृष्टि से देश, जाति, धर्म, समाज और समूची जाति का हित साधन सम्भव हो पाया हो। इस दृष्टि से जैसे राजनीतिक इतिहास में गुप्त वंश के राजाओं का काल भारतवर्ष का स्वर्णकाल माना गया है, उसी प्रकार साहित्य के इतिहास की दृष्टि से पूर्व मध्यकाल या भक्ति काल हिन्दी-साहित्य का स्वर्ण या स्वर्णिम युग माना जाता है। सब से पहले इस ओर संकेत करते हुए डॉ० श्याम सुन्दर दास ने कहा था कि जिस काल-खण्ड में सन्त कबीर, मलिक मुहम्मद जायसी, सूरदास और गोस्वामी तुलसीदास जैसे महान् समाज-सुधारक और सभ्यता-संस्कृति के महान् और शाश्वत तत्त्वों के गाने वाले कवि हुए हैं, निश्चय वह हिन्दी साहित्य का स्वर्ण युग है। ऐसा उन्होंने इस युग की प्रमुख प्रवृत्तियों और विशेषताओं को देख कर ही कहा था। आज तक के सगी प्रमुख विचारक और विद्वान् इस बात को एकमत से स्वीकार करते हैं।

सम्वत् 1375 से लेकर 1700 वि० तक का काल-खण्ड हिन्दी-साहित्य के इतिहास में भक्तिकाल के नाम से जाना जाता है। इस समय राजनीति, धर्म, समाज, संस्कृति आदि के हर स्तर पर देश की परिस्थितियाँ विषम, अस्थिर और डावाँ डोल थीं। राजनीति के क्षेत्र में यहाँ के राजाओं के रगड़े-झगड़े तो चल ही रहे थे, एक के बाद एक तुर्कों, पठानों, मुगलों आदि विदेशियों के आक्रमण भी हो रहे थे।

आरम्भ में ये विदेशी लूट-मार करके लौट जाया करते थे, लेकिन बाद में इन्होंने तलवार के बल पर यहाँ अपने राज्य स्थापित कर लिए। बलपूर्वक धर्म परिवर्तन की घटनाएँ भी होती रहीं। इस्लाम और हिन्दू धर्म में तो संघर्ष चल ही रहा था; यहाँ स्थित वैष्णव, शैव, शक्ति आदि विभिन्न सम्प्रदाय भी आपस में लड़ते-झगडते रहते थे। शासक क्योंकि राजनीति और धर्म बताया करते थे. इस कारण सारा समाज उनसे पिट कर तरह-तरह की कुरीतियों,

अत्याचारों, अन्यायों, डम्बरो और पाखण्डो का शिकार हो रहा था। इन प्रभावों से यहाँ के धर्म और सभ्यता-संस्कृति के सभी रूप और अंग भी बुरी तरह से प्रभावित हो रहे थे।

फलस्वरूप सारा जीवन, समाज दिशाहीन, आस्था विहीन होकर भटक गया था। ऐसे समय में स्वामी प्रमानन्द के प्रयास और प्रेरणा से उत्तर भारत में भक्ति आन्दोलन प्रवर्तित हुआ। उनके अनुयायियों में हिन्दू-मुस्लिम सभी प्रकार के लोग हुए। उनके उपदेशों और प्रयासों से धर्म के स्वरूप को पहचान कर बिना किसी भेद-भाव के भक्ति करके लोक-परलोक सुधार का जोरदार प्रयास किया जाने लगा। ऐसा करने वाले सन्तों, सूफियों ने अपनी बात कहने के लिए हिन्दी-काव्य-रचना को अपना माध्यम बनाया। फलस्वरूप इस प्रकार जितना भी साहित्य रचा गया, वह सार्वकालिक और सार्वदेशिक महान् मानवीय गुणों से युक्त और उन्हें जगाकर बढावा देने वाला है। इसी कारण इस समय के कवियों को स्वर्ण युग के कवि और रचे गए साहित्य को स्वर्णयुग या स्वर्णिम काल का साहित्य कहा गया।

इस काल में मुख्य दो भक्ति धाराएँ चलीं। एक निर्गुण भक्ति धारा और दूसरी सगुण भक्ति धारा। निर्गुण भक्ति धारा के जिन कवियों ने ज्ञान को महत्त्व दिया, वे ज्ञानमार्गी और जिन्होंने प्रेम भाव को महत्त्व दिया वे प्रेममार्गी या सूफी कवि कहलाए। इसी प्रकार सगुण भक्ति धारा के जिन कवियों ने मर्यादा भाव को बढ़ावा दिया वे रामभक्त और जिन्होंने माधुर्य भाव को बढ़ावा देकर भक्ति का प्रचार किया वे कष्ण भक्त कवि कहलाए। दोनों धाराओं और उनकी चारों शाखाओं के कवियों ने ज्ञान को आवश्यक बताया ताकि उचित-अनुचित, माया-मोह आदि का स्वरूप समझकर, सभी प्राणियों को एक ही ईश्वर की सन्तान समझ कर सभी प्रेम-भाव से रहें, अपना-लोक परलोक सुधारें। सभी कवि एकेश्वरवादी थे अर्थात् नाम-रूप की महत्ता, उस तक पहूँचने के रास्ते अलग मान कर भी मूल रूप से ईश्वर एक है इस बात पर पक्का विश्वास करते थे। इसी बात का अपने साहित्य के द्वारा उन्होंने प्रचार-प्रसार भी किया। सभी भक्त और सन्त कवि समन्वयवादी बाद भक्ति, कर्म, ज्ञान तीनों का आवश्यक महत्त्व स्वीकार करते थे। यह अलग बात है कि किसी ने भक्ति को अधिक महत्त्व दिया और किसी ने ज्ञान को। कर्म का महत्त्व सभी ने समान रूप से स्वीकारा, बल्कि कर्म करके ही अपना पेट पाला। इसी तरह निगुण या सगुण ईश्वर की उपासना पर बल देते हुए भी सभी ने दोनों का समान महत्त्व स्वीकार किया ताकि इस प्रकार के सभी झगड़े समाप्त हो सके। इसी प्रकार भक्ति के क्षेत्र में। जाति-पाति, छुआ-

छूत, ऊँच-नीच के भेद भाव आदि को किसी ने भी स्थान और महत्त्व का दिया। सभी कवि सब प्रकार के आडम्बरों, पाखण्डों, बाह्याचारों आदि के विरोधी थे। सभी ने सच्चे मन से की जाने वाली उपासना भक्ति को ही महत्व दिया।

वास्तव में भक्ति काल के सभी कवियों का व्यवहार एक अनुभवी और कुशल डॉक्टर जैसा था। जैसे डॉक्टर रोग और उसके कारणों को अच्छी प्रकार से भाव पहचान करके ही उनका निदान एवं उपचार किया करते हैं, उसी प्रकार इस काल खण्ड के कवियाँ ने जीवन-समाज, देश-काल की नाडी को पहचान कर न केवल भारतीयता बल्कि समूची मानवता को सभी प्रकार के तापों का निदान कर पाने में समर्थ साहित्य रच कर उसे बचा लिया। इतना निश्चित है कि यदि मध्यकाल में भक्ति-आन्दोलन न चला होता, तो भारतीय सभ्यता-संस्कृति का न जाने क्या हश हुआ होता। तब निश्चय ही भारत की जो तस्वीर आज विद्यमान है, वह कुछ और की और, न पहचानी जा सकने वाली हो गई होती। वास्तव में भाव, विचार,भाषा, शैली आदि सभी प्रकार के समन्वयभाव को भक्ति काल की एक सम्पूर्ण एवं समग्र विशेषता कहा माना जा सकता है। बाकी सभी कुछ इसी के अन्तर्गत आ जाता है यों, तो सन्त कबीर, मलिक मुहम्मद जायसी, तुलसीदास और सूरदास चारों इस स्वर्ण काल के प्रमुख महत्त्वपूर्ण कवि मान्य हैं; पर सर्वांगीणता की दृष्टि से तुलसीदास सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और इस काल में रचे गए समूचे साहित्य के प्रतिनिधि माने जाते हैं। अपने इस शाश्वत, उदात्त मानवीय गुणों के कारण भक्ति काल को हिन्दी-साहित्य का स्वर्ण या स्वर्णिम युग उचित ही माना गया है।